International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.340, Volume 03, No. 02(IV), April - June, 2021, pp.178-180

कामकाजी महिलाएं और दोहरी भूमिका

श्रीमती पुष्पा मीना*

प्रस्तावना

''कर पदाघात अब मिथ्या के मस्तक पर
सत्यावेषण के पद पर निकलों नारी
तुम बहुत दिनों तक बनी दीप कुटिया का
अब बनों क्रांति की ज्वाला की चिंगारी''।

उक्त पंक्तियों को सार्थक करते हुए आज की नारी हर क्षेत्र में पुरुषों के वर्चेस्व को चुनौति दे रही है। विशेषतः व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं के काम का दायरा बहुत बडा है। आज के दौर में परम्परागत कार्य जैसे– सिलाई बुनाई, खेती–बाडी, घरों व सडकों इत्यादि की साफ सफाई के अतिरिक्त पुरुष वर्चेस्व व्यवसायिक क्षेत्र– कानून, चिकित्सा, इंजिनियरिंग और सैन्य सेवाओं जैसे क्षेत्रों में उल्लेखनीय सेवाएं दे रही है। महिलाओं का कार्यक्षेत्र में प्रवेश उनकी आर्थिक आवश्यकता, आधुनिकीकरण एवं शिक्षा, आर्थिक विवशता, उपयोगी व उच्चतर जीवन स्तर अनेक कारण से रहा होगा किन्तु इससे महिलाएं आर्थिक , शैक्षणिक और सामाजिक स्तर पर सशक्त भी हुई है और उनकी सामाजिक परिस्थिति एवं सम्मान में वृद्धि भी हुई है किन्तु इसके बाबजुद अगर कुछ नही बदला तो वह है पितृसत्तात्मक सामाजिक दृष्टिकोण। परिणामतः महिलाओं को पेशेवर दायित्वों के साथ घर की जिम्मेदारी के रुप में दोहरी भूमिकाओं का निर्वाह करना पड रहा है।

महिलाओं को परिवार और समाज में सम्मान पाने के लिए आर्थिक स्वालम्बन की बात की जा रही है। यदपि अतिशिक्षित व उच्च शिक्षित परिवारों में महिलाएं पहले से ही उच्च पदो पर आसीन रही है किन्तु मजदूर वर्ग में शिक्षा के अभाव में एवं रूढीवादी सोच के कारण आर्थिक रुप में आत्मनिर्भर होते हुए भी अपमानित होती रही है और वर्तमान में भी बदलाव नहीं हो पाया है। मध्यवर्गीय महिलाएं भी शिक्षा और अपने अधिकारों के प्रति सजगता के कारण घर की चार दीवारी से बाहर निकलकर बाहरी कार्यो को अंजाम दे रही है। परन्तु हमारे समाज का ढांचा पुरुषसत्तात्मक होने के कारण कामकाजी महिलाओं को नए प्रकार के संघर्ष से झूझना पड रहा है, अब उन्हे अपने कामकाज के साथ घर के दायित्वों को भी यथावत निभाना पडता है। पुरुष आज भी घर कार्यो की जिम्मेदारी, बच्चों की देखभाल एवं अन्य पारिवारिक कार्यो की जिम्मेदारी महिलाओं की ही मानते है। कुछ पुरुष तो कुछ भी सहयोग करने को तैयार नहीं होते, यदि महिला उन पर दबाव बनाती है तो अक्सर पुरुषों को कहते सुना जाता है कि अपनी नौकरी अथवा बाहरी कार्यो को छोडकर घर के कार्यो को ठीक से निभाओं, महिला की जिम्मेदारी घर संभालने की होती है। मजबूरन महिला दो पाटो के बीच पिस कर रह जाती है परिणामतः इन महिलाओं को अपने कार्यक्षेत्र और घर दोनो को बीच सामंजस्य बिठाने में ज्यादा मेहनत करनी पड रहीं है। यानी भूमिका संघर्ष एवं औक्यूपेंशलन स्ट्रेस का सामना करना पड रहा है।

[6] सहायक आचार्य, समाजशास्त्र, स्व. राजेश पायलट राजकीय, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बॉदीकुई, राजस्थान।

कारोवारी संगठन एसौचौम द्वारा किए गए एक सर्वे से पता चलता है कि 78 प्रतिशत कामकाजी महिलाओ ंको कोई ना कोई लाइफस्टाइल डिसॉडर है, 42 प्रतिशत को पीठदर्द, मोटापा, अवसाद, मधुमेह, उच्च रक्तचाप की शिकायत है। क्योकि लगभग 83 प्रतिशत महिलाएं परिवार एवं कार्यक्षेत्र के परे स्वयं के लिए कोई समय नही निकाल पाती , न ही वह किसी तरह का व्यायाम कर पाती है और न ही सम्पूर्ण पोषण ले पाती है। यानी कामकाजी महिलाओं का पालेसिस्टिस ओबोरिन यानी पीसीओएस ग्रस्त होने के कारण बार बार बीमार पडती है। इससे इनफिर्टिलिटी की समस्या भी उत्पन्न होने की सम्भावनाएं भी बढ जाती है।

दोहरी जिम्मेदारियों के बोझ के चलते तनाव एवं अन्य स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से वह जुझती है साथ ही उसे हमारे सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश चाहे वह धर हो या बाहर अनेक चुनौतियों का सामना करना पड रहा है। अनेक अध्ययनों से यह प्रमाणित होता है कि कार्यरत महिलाओं के समाने मुख्य समस्या भूमिका संघर्ष की है वे अपने आप को परिवार व कार्यालय के अनुसार कैसे समायोजित करती है। निम्न स्व प्रतिबिम्ब और दौहरी भूमिकाएं कामकाजी महिलाओं के लिए भूमिका संघर्ष पैदा करती है जिसका प्रभाव पारिवारिक सम्बन्धों एवं अपेक्षित भूमिकाओं पर पडता है। कामकाजी महिलाएं आज भी आर्थिक रुप से पुरूषों से मुक्त नहीं है क्योकि जो महिलाएं अपने परिवार की अर्थव्यवस्था में योगदान करती है वे अपनी आय को अपनी इच्छानुसार व्यय करने के लिए स्वतंत्र नही है। बाहरी तनाव को झेल कर घर अपने घोसले में भी उसे अनेको तरह के तनाव को झेलना पडता है। उससे एक सफल गृहिणी होने की अपेक्षा की जाती है। लेकिन निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता को आंशिक या ना के बराबर स्वीकृति मिलती है। अर्थात् कर्तव्य पूरे करने पर अधिकारों की बात मत करों। यदि शिक्षा एवं स्वालम्बन उसे स्वयं के लिए सोचने या निर्णय निर्माता के रुप में स्थापित करने का प्रयास करते है तो यह परम्परागत रूढीवादी एवं पुरुष प्रभुत्व समाज उसे घमण्डी, आवारा एवं अन्य अमर्यादित शब्दावली द्वारा समाज की मुख्यधारा से पृथक करने का प्रयास करता है।

उक्त सन्दर्भ में कवि रामधारी सिंह की यह कविता सही प्रतित होती है

''मुक्त करों नारी को मानव, चिरवंदिनी नारी कों
युग युग की निर्मन काया से जननी सखी प्यारी को।''

समाजिक नैतिक व मनोवैज्ञानिक आयामों में भी उसकी स्थिति पुरुषों के समान नहीं है। जिस प्रकार वह नौकरी करती है घर का काम करती है इन सबके प्रति उसकी निष्ठा उसके जीवन के स्वरुप के संदर्भ पर निर्भर करती है और समाज द्वारा उसका मूल्यांकन बिल्कुल अलग परिप्रेक्ष्य मे ंकिया जाता है। विशेषतः निम्न व ग्रामीण क्षेत्रों में कामकाजी महिलाअें को अधिकाशं समय बाहर घर से दूर बीताना पडता है। परिणामतः परिवार को उचित समय नहीं दे पाती , जिससें परिवार की सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिवेश पर तो सीधा नकारात्मक असर पडता है ही साथ ही परिवार व समाज समय समय पर अपमानिक भी करता रहता है।

कामकाजी महिलाओं की स्थिति को यदि देखे तो उसे भूमिका संघर्ष के साथ बाहर व घर में अनेक चुनौतियों का पल पल सामना करना पड रहा है।

- महिला के लिए नियोक्ता भी सहज नहीं है। साधारणतया महिलाएं असंगठित क्षेत्र में है। इसलिए उन्हे जीवन व्यवस्था इत्यादि की असुरक्षा तथा निम्न वेतन मिलता है।
- पदौन्नति में भेदभाव, यौन उत्पीडन, व्यंग्यात्मक परिहास का सामना, उसे पल पल करना पडता है।
- मातृत्व अवकाश को अनचाहा बोझ मानने की प्रवृति भी सशक्तिकरण की सभी अवधारणाओं पर प्रश्नचिन्ह लगा देती है। सर्वेक्षण के अध्ययन से पता चलता है कि चाहे विश्व का कोई भी समाज हो महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश या कैरियर चुनने की चुनौति मुॅह फैलाए खडी है।
- संध्या समय अपने कार्य स्थल से लौटते समय भी उसे अनेक अनहोनी की आशंका से ग्रस्त रहना पडता है उसके मन में व्याप्त असुरक्षा की भावना आज भी उसके लिए जीवन को कष्ट दायक बनाये हुए है।

- महिलाओं को अपने वेतन के मामले में भी शोषण का शिकार होना पडता है।
- यदि कोई महिला सरेआम किसी अत्याचार का शिकार होती है तो समाज के लोग उसका बचाव करने से भी डरते है अतः उसे समाज और भीड में भी अपने पक्ष में माहौल मिलने की सम्भावना कम ही रहती है। यदि यह कहा जाए कि जिस शोषण की स्थिति से बाहर निकलने के लिए वह घर की चार दिवारों से बाहर आई थी उस मकसद में सफल होना, अभी दूर ही दिखाई देता है।

अतः सामाजिक सांस्कृतिक स्तर पर मूल्य परिवर्तित किये जाये। क्योकि मूल्य परिवर्तन के बिना सामाजिक उद्देश्य प्राप्त नहीं किए जा सकते। यह सर्वप्रमाणित है कि महिला यानी समाज की आधी जनसंख्या को बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करवाने के साथ पुरुष प्रभुत्व, रुढीवादी सोच को परिवर्तित करना होगा। क्योकि सामाजिक विधानों ने उन्हे राजनैतिक आर्थिक सामाजिक और धार्मिक अधिकार तो दिये है किन्तु विस्तृत दृष्टिकोण जो उनकी अभिरुचियों और मूल्यों में बदलाव ला सके की व्यापक आवश्कता है।

यह सही है कि आधुनिक नारी पुरुष के साथ कंधें से कंधा मिलाकर चल रही है और पारिवारिक, सामाजिक उन्नति में अपना अहम् योगदान दे रही है किन्तु हमे सामाजिक वैधानों के साथ एक स्वस्थ सामजिक परिवेश तैयार करना पडेगा जिसमें नारी को एक बराबरी का मानव मानकर कार्य का उचित विभाजन किया जाए एवं संकुचित, रुढिवादी विचारधारा को समाप्त कर समानता एवं स्वतंत्रता के सामाजिक मूल्यों की स्थापना की जाये, तब ही एक महिला एक सशक्त मानव के रुप में अपनी भूमिकाओं का निर्वाह कर सकेगी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. आहुजा, राम भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स
2. शाह, घनश्याम, भारत में सामाजिक आंदोलन संज पब्लिकेशल दिल्ली 1998
3. Dupe, S.C. Tradition and Development, Vikas Publishing House, New Delhi, 1990
4. दैनिक भास्कर, मधुरिमा, 26.01.2021

❖◆❖